शोध मंथन Vol. XIII No.II Apr.-June 2022 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 8.783 (SJIF)

समीक्षावादी चित्रकारों में से प्रमुख 'त्रयी' और प्रमुख मान्यताएँ

प्राप्तिः 07.05.2022
स्वीकृतः 04.06.2022

36

डॉ० अमृत लाल
एसोसिएट प्रोफेसर, ललित कला विभाग
मेरठ कॉलेज, मेरठ
ईमेलः *amritlal231972@gmail.com*

सारांश

"कलाकार की तूलिका से कैनवास पर पर्त–दर–पर्त उभरते रूप वर्तमान समाज की गहरी विषमताओं और निरंतर बदलती हुई परिस्थितियों का रेखांकन करने में सजग रहते हैं। समीक्षावादी कलाकर की यह सजगता उसकी ग्रहण शक्ति, कल्पना और मानस–मंथन के फलस्वरूप 'नित्य नूतन रूपों में समाज के दिशा–निर्देशन में सहायक भी होती है। वर्तमान कला की क्या आवश्यकता है इसके क्या कलाकार के अतिरिक्त कोई और बताएगा या निश्चित करेगा? क्या कला की आवश्यकता वही है जो समाज तथा जीवन की है? क्या वर्तमान कला की आवश्यकता खोजने के लिए विदेश जाना पड़ेगा अथवा विदेशी कला से उधार लेना पड़ेगा? अतः वर्तमान कला की आवश्यकता क्या है यही तो भारतीय समकालीन समीक्षावादी कलाकार बताने की कोशिश कर रहे है। अपने नवीन सहज चित्रों तथा कला के द्वारा"

–डॉ0 अमृत लाल

समीक्षावादी चित्रकारों में से प्रमुख ''त्रयी'' और प्रमुख मान्यताएँ

कलाकार की तूलिका से कैनवास पर पर्त–दर–पर्त उभरते रूप समाज की गहरी विषमताओं और निरन्तर बदलती हुई परिस्थितियों का रेख्यांकन करने में सजग रहते है। कलाकार की यह सजगता, उसके ग्रहण शक्ति, कल्पना और मानस–मंथन के फलस्वरूप नित्य नूतन रूपों में समाज के दिशा–निर्देशन में सहायक भी होती है।

गोपाल मधुकर चतुर्वेदी

गोपाल मधुकर चतुर्वेदी का व्यक्तित्व कला क्षेत्र में चित्रकार व मूर्तिकार के रूप में उभरा है। उनके चित्रों मे जहां एक ओर चित्र–लक्षणों की आभा दिखाती है वही आकृतियों में मूर्ति का ठोसपन और त्रि–आयामिक सौश्ठव का आभास भी लक्षित होता है। साहित्य में रूचि होने के कारण उनकी रेखाओं में स्वरों का माधुर्य एवं संगीत का लालित्य सन्निहित है। उनकी कला की सबसे बड़ी विशेषता उसकी ध्वनन शक्ति है। कोई भी कृति इसी ध्वनन–शक्ति के द्वारा कालजयी बनती है। पहले के चित्र में आधुनिकताः परम्परा से प्रतिवद्ध, ज्योतिशा ज्योतिरेकः ''प्रतीक्षा के क्षाण'' तथा आज के चित्र में खूनी राजनीति" ''राजशक्ति और जनसाधारण" ''युवतियों की नियती'' ''सृष्टा की दुविधा" ''मूर्तिकार का भ्रम" आदि चित्र इस कोटि में रखे जा सकते है।

मधुकर चतुर्वेदी की तूलिका ने कैनवास पर जहां राग–रागनियों नायक–नायिकाओं सामाजिक विशमताओं को उरेहा है वहीं अन्तराश्ट्रीय मसलो (जैसे वियतनाम युद्ध, बांग्ला देश की खूनी क्रांति) पर भी उनकी तूलिका उतनी ही ज्वलन्त सशक्त और अर्थपूर्ण ढंग से कैनवास पर चली है।

मधुकर चतुर्वेदी के चित्र में मानव मात्र का दर्द का संघर्षों का तथा असहाय आकाक्षाओं का इतना सजीव चित्रांकन देखने को मिलता है कि मन बरबस सोचने पर बाध्य हो जाता है कि मधुकर चतुर्वेदी स्वयं भी इसी दर्द व घुटन को भोगते होगे अन्यथा उनकी तूलिका मे इतना बल न होता।

वे भारतीय लोक–संस्कृति और परम्परा का पक्का हिमायती है। कहना है कि... ''परम्परा का अटूट क्रम ही विकास का पथ प्रस्तुत करता है बिना परम्परा का निर्वाह किये कौन ऐसा है जो भविष्य के गर्भ में विकास के बीजारोपण की बात कहता हो? ऐसा सम्भव नहीं है। तब वे आज की अशात अव्यवस्थित तथा आकुल कला के प्रयोगों को क्यों अपना रहे ह? जब वे समाज की अनियत्रित अव्यवस्थाओं को गले नहीं उतार सकते तब वे उनका यथार्थ चित्रकन न करके काल्पनिक व प्रतीकात्मक क्यों करते है? इससे वे साधारण–जन को क्या देना चाहते है। वे स्वयं जन–साधारण तक कला को पहुचाने की बात कहते है फिर ऐसे दुरूह चित्रण की व्यवस्था वे स्वंय क्यों स्वीकार करते है?''

''कमी के रूप में उभरे प्रश्नों का उत्तर मधुकर ने बड़े ही सहज ढग से दिया है... **''मै परम्परा का हिमायती अवश्य हूं और उसके अटूट क्रम में ही विकास की गति पाता हूँ।किन्तु कोई यह अर्थ लगाये कि मैं रूढिवादी हूं. यह बिल्कुल गलत होगा। रुढि तो ठहराव का प्रतीक है। में विकास और प्रगति की बात कह रहा हूँ। परम्परा विकास और प्रगति के लिये सम्बल सिद्ध होती है।''**

–गोपाल मधुकर चतुर्वेदी

''जहाँ तक रंगों का चयन और तूलिका–संचालन का प्रश्न है वह स्वय नियत्रित और व्यस्थित होकर कैनवास पर आकारों को उरेहते है इसलिये चित्रे के आकार अशांत आकुल और अव्यवस्थित नहीं दिखायी पड़ते बल्कि अशांत, आकुल और अव्यवस्थित स्थितियों से निकलने एवं नये दिशा–निर्माण के निर्देशक होते है। उन पर प्रतीकात्मक और काल्पनिकता का दोष नही मढा जा सकता है। हा दार्शनिकता का आवरण अवश्य उन पर है उसके लिये भारतीय संस्कार ही कारण है। भारत की मिट्टी में दार्शनिकता और आध्यात्मिकता की जड़ें बड़ी गहराई तक जमी है। यह सत्य है कि ऐसे चित्र जन–साधारण की समझ में पहली बार अधिक सूक्ष्म और सरल भावाभिव्यक्ति प्रदान करते है। इन्हें दुरूह और 'अति काल्पनिक' की संज्ञा देना उचित नहीं होगा।

उनकी कला मे अब सामयिक समस्याओं का चित्रण,जन–सामान्य की सोच के आधार पर होने लगा है। चित्रांकनो में वे प्रतीक प्रयुक्त होने लगे है जिनसे सर्व–साधारण भी परिचित होता है। चित्र इतने साफ सुथरे शक्तिशाली और प्रभावी है कि बरबस मन उसके संयोजन, रंग–रेखा और समीक्षित विषय की भावाभिव्यक्ति का कायल हो जाता है।

'एक मानववादी के नाते मधुकर विरोधी वैप्लविक युद्धो का निन्दक है। और न्याय तथा स्वदेशाभिमान, राष्ट्रीय स्वातंर्त्य युद्ध का उग्र समर्थक है और उनका यही दृष्टिकोण उनकी नई कृतियों में सशक्त विधि से साकार हुआ है। 'रक्त स्नान' (वियतनाम–१), 'युद्ध नही' (वियतनाम–२), 'रक्त शोषक' (वियतनाम–३), रेप ऑफ बागला देश– १.२, ३.४.५, माँ की गोद' (इसमें काले और गोरे

शिशु माँ की गोद दिखाये गये है, यह रंग–भेद पर व्यंग्याभिव्यक्ति है) जैसे चित्रों से कलाकार में निहित मानवता और विश्व–समस्याओं के प्रति चेतनता का भाव लक्षित होता है।

''समीक्षावाद आन्दोलन में हम ग्रहण करने की भावना रखते है। और इसलिये हम जन–साधारण से जुड़ने और भारतीय जन–जीवन के नजदीक पहुंचने का प्रयत्न कर रहे है। हम कला को व्यग्य के माध्यम से कहते है, साधारण–जन जैसा सोचता है वैसा ही हम प्रस्तुतिकरण करते है। साधारण–जन के बिम्ब सरलतम होते है, हम इसको मानते हुये ऐसे चित्रों की रचना करते है जिनको सभी समझ सके। हम ज्यादातर प्रतीक उनके बीच से ही लेते है। इन दिनों प्रत्येक क्षेत्र मे राजनीति हावी है, इसलिये मेरे चित्रों की पृष्ठभूमि में ज्यादातर राजनीति है।''

–गो० म० चतुर्वेदी

'जनतंत्र' तथा 'अर्थतन्त्र' से जुड़े चित्रों में मुख्यतः नेताओं की तथाकथित विशालता (नग्नता), अधे सिपाही द्वारा जग को रास्ता बताने की आश्चर्यजनक बात कही गयी है। देखा जाये तो मधुकर व्यक्तिवादी आधुनिक चित्रकला से हटकर जनहित में जनता की आशा–आकाक्षाओं का प्रतिनिधित्व करते हुये भारत–भूमि की मृत्तिका गध' के एक सरल तथा स्पष्ट शैली में नई कला' का निर्माण करना चाहता है।

–बालादत्त पांडे

बालादत्त पांडे

बालादत्त पांडे विचारों और चेतन प्रकृति के चितेरे है। वे सत्य और आहाद को जीवन में घुला–मिला देना चाहते है। पांडे उत्तर प्रदेश के पहाड़ी प्रदेश के रहने वाले है। अतः पर्वतीय भू–दृश्यों की रहस्यात्मकता से परिचित है इससे उन्हे अपने अनुभवों और मानव मन की गहराईयों को समझने और अव्यवस्था को समझने तथा अध्यापक और शिक्षार्थी के सम्बन्ध को पहचानने मे बडी मदद मिली बालादत्त पांडे ने अनुभव किया है कि युवा पीढी का भविष्य दुर्भाग्य रूपी चेहरे अगाध गर्त में लटक गया है। बालादत्त पाडे आज भी इलाहाबाद मे अध्यापन कार्य से मुक्त हो चित्र सृजन में रत है। उनके चित्र समीक्षावादी कलाकारों के चित्रों में अपनी बिल्कुल अलग पहचान रखते है।

शिक्षा–व्यवस्था की यथास्थिति और उसमें शामिल हो गये असामाजिक तत्वो का इतना अच्छा चित्रण पहले कभी नही देखा था। 'ब्लैक बोर्ड' शीर्षक से बनायी गयी बालादत्त जी की कलाकृतिया तकनीक की दृष्टि से सर्वोतम औरसदेश की दृष्टि से अति महत्वपर्ण बातादत्त पांडे का कथन है–'मेरे चित्र मूलतः समाज की व्यथा को प्रकट करते है। मैने शिक्षा से जुडे चित्र इसलिये भी बनाये क्योकि मैं वों से शिक्षा–जगत में चल रहे नाटक को देख रहा हूँ। जब हम बाहर होने वाली घटनाओं पर सीरीज बनाते है। तो क्यों नही हम अपने पास बिल्कुल नजदीक ही चल रहे क्रूरतम् नाटक के पात्रों के मुखोटे उतार कर रख दे। मैने इन चित्रो मे यही करने की कोशिश की है। मैं आधुनिक कला के कुछ पक्षो का प्रशंसक हूं। पर उन्हें चित्र बनाते समय स्वीकारता हूं। हा, नयी तकनीकी प्रवीणता होने से कलाकृति निर्माण में प्रवीणता आती है। मैं अपनी कलाकृतियों को दर्शको और अपने बीच बने सेतु के रूप में देखता हूँ क्योकि कलाकृतिया मेरी भावना को दर्शकों तक संप्रेशित करती है।''

–बालादत्त पाण्डे

'शिक्षा सर्वग्रास', 'शिक्षा सलीब पर चढ़ी', 'शिक्षा–डूबता–श्याम पट्ट आधार', 'शिक्षा ज्ञान विस्फोटन', 'शिक्षा–अनपढ, 'श्याम पट्ट १, २, ३, ४, आदि चित्र पाडे जी ने अपने समीक्षावादी चिन्तन के आधार पर बनाये है। इन चित्रे का आधार जहाँ शिक्षा क्षेत्र में व्यक्त अनियमितताये, भाई–भतीजावाद, राजनीतिक दलाली, व्यापार आदि है वही मानसिक गुलामी भी है, जिससे हम आज तक नहीं उबर पाये है। बालदत्त पांडे का कलाकार स्वयं परिस्थितियों का दर्द भोग रहा है वह उस 'टीस' को सहन नहीं कर पा रहा है। कि स्वतन्त्रता के वाद आज तक जब शिक्षा पाने वाले शिक्षार्थियों के पास न तैठने को टाट है, न अध्यापकों के लिये चार पाये की कुर्सी। डिग्री कॉलिजों में राजनीति इस कदर हावी है कि अध्यापक शिक्षा प्रदान करे या सरकार के हाथ मजबूत करे? युवा पीढ़ी को ज्ञान प्रदान करे या चुनाव लड़ने की राजनीति में निष्णात् बनाये। पांडे जी दमघोटू शिक्षा की परिधि में फसे उस चलन को आरोपित कर रहे है। जो आज प्रचलित है।

बालादत्त पांडे के कैनवास जन–साधारण की सोच की परिधि में है। उनकी पहचान के है। कलाकार बालादत्त पांडे स्वयं जन सामान्य के मध्य के है। वे तो अपने को जन कलाकार कहलाने में गर्व महसूस करते है।

–गो० म० चतुर्वेदी

रामचन्द्र शुक्ल

प्रत्येक व्यक्ति के दो या दो से अधिक व्यक्तित्व हुआ करते है। दो तो प्रायः सभी के होते हैं। एक वह जो प्रत्यक्ष दिखाई पडता है और दूसरा अदृश्य होता है। अधिकतर दोनो एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत से लगते है। और दोनों का ढंग निराला होता है। जो व्यक्ति इन दोनों में एकता स्थापित करने के ओर उद्यत होता है कि वही व्यक्ति, कवि, कलाकार, संगीतज्ञ या फिर भक्त बन सकता है। एकता स्थापित करने के दो तरीके है या तो बाह्म के साथ मिला दिया जाये। प्रथम तरीका योगियों का है दूसरा कलाकारों का।

"मैं योगी नहीं कलाकार पसंद करता हूँ। यही मूलाधार है जिसके कारण में चित्रकला के क्षेत्र में प्रविष्ट हो गया, उसी समय जब मेरी चेतना आँख खोली।"

–प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल

रामचन्द्र शुक्ल का चित्रकला के क्षेत्र में अनजाने प्रवेश हुआ है ऐसा शुक्ल सोच सकते है कम से कम मैं नहीं क्योंकि जब शुक्ल जी में बैठा कलाकार चैतन्य हुआ तब उन्होंने वे ही साधन जुटाये जो शुक्ल जी के लिये उपयुक्त और सशक्त माध्यम थे, नही तो गुरू की उंगली छोड़कर चले के पश्चात, अनेकानेक बीहड़ों में भटकने के पश्चात् और जबरदस्त आत्म–विश्वास लेकर कला–पथ पर चलने को रामचन्द्र शुक्ल क्यों दृढ़ बनते? और यहां शुक्ल जी स्वीकार करते हैः–

"मेरा दृष्टिकोण आरम्भ से ही प्रयोगवादी रहा है। प्रयोग के बल पर मैंने अपने लिये रास्ते बनाये है और उन्हीं पर चलकर आज जहाँ हूँ वहा तक आया हूँ। जिन रास्तों पर पद–चिन्ह दिखायी पड़ते है। उन पर मेरी इच्छा ही नहीं होती चलने की।"

–प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल

पहले शुक्ल जी प्रयोगों पर विश्वास करते रहे, उ पर चलते रहे। उन्होंने अनेक कला–क्षेत्र की बीहड़ गलियों को छान मारा और आज इसीलिये एक ऐसा रास्ता अपा लिया है जो सुगम है, सीधा है

और आत्म–सम्मान के साथ चलने के लिये प्रशस्त। शुक्ल जी ने प्रकृति–चित्रण, दृश्य–चित्रण और व्यक्ति चित्रण में कभी रूचि हीं दिखायी और उन्हीं के कथानुसार न ही पौराणिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, साहित्यिक, तथा सामाजिक कथाओं को चित्र रूप में अनुवादित करना ही उन्होंने पसन्द किया।

शुक्ल जी आज शुद्ध समीक्षावादी चित्रकार है। उनके चित्र 'कुर्सी में आपातकाल– आधुनिक कला की दौड' और 'बाढ़ पीढ़ित सेवा–केन्द्र' 'राजनीतिक यथार्थ' 'यात्रा' 'अन्तिम भोज' आदि इस तथ्य के प्रमाण है कि वे समझने लगे है कि पाश्चात्य मापदंडों पर आधारित भारतीय आधुनिक कला भारतीय जन–मानस को प्रभावित करने में असफल रही है। उनका उपयोग किसी टंगी सजावट की सामग्री से अधिक नहीं हो सकता। शुक्ल जी की दृष्टि में राजस्थानी और मुगल शैलियों तकीकी कौशल में लगभग एक जैसी ही थी, किन्तु अलग–अलग दृष्टिकोण के कारण ही उन्हें पहचान मिली, अलग नाम मिले। इसलिये दृष्टिकोण की भिन्नता ही नयी शैली या कला के नये आन्दोलनों को जन्म देती है, ऐसी उनकी धारणा है।

वे एक आलोचक अनीस फारूखी साहब को उत्तर देते हुये कहते है.. "समीक्षावादी कला प्रतीकवादी है और इस तरह की प्रतीकवादी शैली कभी पश्चिम में नहीं पनपी। चित्रें के बुनियादी स्वरूप में समीक्षात्मक व्यंग्यात्मक तथा प्रतीकवादी स्वरूपों की प्रधानता ही एक प्रमुख विशेषता है। समीक्षावादी कला निश्चित ही एक आधुनिक कला शैली है, किन्तु न तो पुरातनवादी न पश्चिमीवादी। गणेश पाडन अथवा भूपेन खक्खर के चित्र यदि समीक्षावादी चित्रे से मिलते है तो उन्हें भी हम समीक्षावादी चित्रकार मानने को तैयार है। यदि उनका वही दृष्टिकोण है जो समीक्षावादी का।"

–प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल

प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल जी जीवट के कलाकार है, लेखक है, कला समीक्षक है। फिर भी अपने बारे में उनका ख्याल है कि "आधुनिक कला क्षेत्र में उन्हें क्या थ्यान मिल सकेंगा यह अन्य विद्वान, कला–आलोचक शायद कभी बता सकें। पर आज के सिद्धान्ततः गालियां लिखना छोड़ चुके है। इसलिये उम्मीद कम है। मैं इतना ही कहना चाहूंगा कि यदि कभी रद्दी कलाकारों की सही लिस्ट बनायी जाये तो उसमें इस कलाकार का नाम अवश्य मिल जायेगा।"

"अध्यापन और चित्रकला रामचन्द्र शुक्ल के जीवन में तीन चौथाई है और एक चौथाई में उनके सारे जीवन के कार्य–कलाप।"

–डॉ0 गोपाल मधुकर चतुर्वेदी

1985 में शुक्ल जी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय दृश्य कला संकाय के चित्रकला विभाग से सेवा निवृत हुए और इलाहाबाद चले आये। कला में खोज की प्रवृति अब भी उन्हें व्यथित कर रही थी। कहीं न कहीं मन में एक कसक सी उठती रहती थी, कला की इतनी साधना, इतनी कलाकृतियाँ, धनाभाव, रंग और ब्रश, कैनवास का अभाव उन्हें परेशान कर रहा था। एक तरफ अभाव दूसरी तरफ भावद्वंद चला और ब्रश रख दिया। कने लगे, "मुझे जो मिलना था मिल गया।" अपना दर्शन, अपी विवेचना परन्तु कला में खोज की प्रवृत्ति ने स्वतः एक दिन भारतीय कला की तलाश में उन्हें "मधुबनी" कला के पास ले जाकर खड़ा कर दिया। फिर उठाया उन्होंने रंगों और ब्रश को नहीं, स्केचपेन और कागज के छोटे टुकड़ों को, उस पर मधुबनी शैली का प्रयोग कर अनेक चित्रों को निर्मित कर डाला। या छोटे चित्र थे समय अधिक नहीं लगता खर्च अधिक नहीं आता, रखने में सुविधा जनक। मधुबनी

में प्रयोग चल ही रहा था कि अशान्त मन न जाने कहाँ से पुनः सहज पूर्ण, सौन्दर्य प्रधान चित्रण की और भाग गया। शारीरिक क्षीणता आर्थिक परिस्थितियों ने उन्हें बांधकर रख दिया। लघुचित्रण की ओर चले। चित्र बनते चले गये। तलाश चलती रही, खोज चलती रही, अचानक वर्ष 2005 के आगमन के साथ पुनः उनकी शैली में परिवर्तन आया। इसका प्रतिफल है। अतः प्रज्ञा से उपजे चित्र (अज्ञात चित्रण अथवा अन्तः प्रज्ञात्मक शैली)। कलाकार के ही शब्दों मेंः–" शान्त सरोवर पर तरह–तरह की लहरे बनने बिगड़े लगती है, जब पवन उन्हें छूते हुए गुजरती है। उन लहरों का क्या स्वरूप होगा। न सरोवर जानता है न पवन। यही स्थिति "अन्तः प्रज्ञा" से उपजी कला की भी है। कागज या कैनवास शान्त सरोवर सा है और कलाकार का अन्तः मन पवन सरीखा है। माध्यम होती है तूलिका। चित्र बनते बिगड़ते चले जाते है।

–व्यक्तिगत वार्तालाप के अनुसार

समीक्षावाद की प्रमुख मान्यतायेः–

1. **दार्शनिक पक्षः–**समीक्षावादी कलाकार कला का मुख्य कार्य उन सभी की समीक्षा (मूल्यांकन) मानते है, जो भी हम देखते, समझते या अनुभव करते है।

2. **कला का उद्देश्यः–**समीक्षावादी कलाकार कला का उद्देश्य समाज का उद्वोधन तथा अपने परिवेश तथा जीवन को परिष्कृत अथवा शुद्ध करना मानते है।

3. **मूल–दृष्टिकोणः–**समीक्षावादी कलाकारों का प्रमुख दृष्टिकोण है। सरल, सहज, सीधी, तीक्ष्ण एवं प्रतीकात्मक शैली तथा सरल भाषा में शक्तिशाली ढंग से सामाजिक चेतना की अभिव्यंजना करना।

4. **प्रमुख सिद्धान्तः–**

(क) किसी भी विदेशी, देशी प्राचीन अभवा अर्वाचीन चित्र शैली का अनुसारण न करना।

(ख) ऐसी कला–भाषा में अभिव्यंजना करना कि सभी सरलता से उसे ग्रण कर सकें या समझ सकें।

(ग) 'आकार' आपने में महत्वपूर्ण नहीं है। ऐसे आकारों की ही रचना करनी चाहिये जो मूल भाव को सरलता से स्पष्ट करने में सहायक हो।

(घ) 'तकनीक' की आवश्यकता से अधिक महत्व नहीं दिया जाना चाहिये। तकनीक वही तक उपयोगी है, जहाँ तक वह मूल अभिव्यंजा को स्पष्ट करने में सहायक होती है।

(ड) चित्रकला में सबसे अधिक महत्व 'अर्थ' तथा 'संदेश' को दिया जाना चाहिये। चित्र में आवश्यकता से अधिक एक भी वस्तु आकार रंग अथवा अनावश्यक सज्जा को पर्दापण नही करने देना चाहिये, इत्यादि।

संदर्भ

1. शुक्ला, प्रयाग. कला समय समाज. पृष्ठ **41** से **52** से साभार।
2. शुक्ल, प्रो0 राम चद्र. आधुनिक कला 'समीक्षावाद'. पृष्ठ **74–75** से साभार।
3. प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल से व्यक्तिगत वार्तालाप के अनुसार।